❁ अठारहवां अध्याय ❁

।। सारांश।।

गीता अध्याय 18 के श्लोक 1 में अर्जुन ने प्रश्न किया कि हे महाबाहो! मैं सन्यास तथा त्याग के तत्व यानि निष्कर्ष को भिन्न-भिन्न जानना चाहता हूँ।

''त्यागने और न त्यागने योग्य कर्मों का ज्ञान''

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 2 :- गीता ज्ञान देने वाले ने अन्य से सुना हुआ ज्ञान इस प्रकार बताया कि (कवय) कवि जन मनोकामना पूर्ण करने की इच्छा से किए भक्ति कर्मों को त्याग कहते हैं। अन्य अपने आपको विचक्षण यानि विचार कुशल मानने वाले कर्मों के फल के त्याग को त्याग कहते हैं।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 3 :- (एके) एक-आधा यानि कोई-कोई (मनीषिणः) अपने को विद्वान मानने वाले कहते हैं कि सर्व कर्म दोषयुक्त हैं। इसलिए सब त्यागने योग्य हैं और दूसरे कहते हैं कि यज्ञ, दान, तप रूप कर्म त्यागने योग्य नहीं हैं।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 4 :- हे शेर पुरूष अर्जुन! त्याग और सन्यास इन दोनों में से पहले त्याग के विषय में मेरा विश्वास सुन। त्याग तीन प्रकार का कहा है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 5 :- जो भक्त के कर्तव्य कर्म यज्ञ यानि धार्मिक अनुष्ठान जैसे दान, तप आदि स्वधर्म पालन करने में संघर्ष में होने वाले कष्ट को तप कहा जाता है। ये कर्म त्यागने योग्य नहीं हैं। वे तो अवश्य करने के हैं क्योंकि यज्ञ दान और तप कर्म ही विद्वान भक्तों की आत्मा को पवित्र करने वाले हैं।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 6 :- :- इन उपरोक्त कर्मों के फल की इच्छा व संसार में आसक्ति त्याग करके करना चाहिए। यह मेरा निश्चय किया हुआ श्रेष्ठ मत यानि विचार है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 7 :- :- इसलिए नियत यानि शास्त्र अनुकूल कर्म का त्याग उचित नहीं है। जैसे इसी अध्याय 18 के श्लोक 48 में कहा है कि अग्नि में धुंवे की तरह प्रत्येक काम में कुछ दोष भी होता है। जैसे धुँवा होने के के भय से भोजन बनाने के लिए जलाने वाली अग्नि को त्यागा नहीं जाता। इसी प्रकार अनिवार्य शुभ कर्म में भले ही कुछ पाप भी होता है, वे त्यागे नहीं जा सकते। जैसे किसान खेत जोतता है। उसमें करोड़ों जीवों की एक दिन में हिंसा होती है तो भी उसे त्यागा नहीं जा सकता। किसान का उद्देश्य जीव हिंसा करना नहीं है, अपना कर्तव्य कर्म करना है। (पापों से मुक्ति की विधि है कि पूर्ण संत से दीक्षा लेकर भक्ति करने से कर्म प्रतिदिन ही समाप्त होते रहते हैं। जैसे प्रतिदिन पहनने वाले वस्त्र मैले होते हैं, परंतु प्रतिदिन साबुन-पानी से साफ करने से मैल साथ की साथ समाप्त हो जाता है। जो गुरू बनाकर शास्त्र विधि अनुसार भक्ति नहीं करते, उनको वे पाप लगते रहते हैं। जिस कारण से उनको वे सर्व कर्म भोगने पड़ते हैं। सतगुरू के भक्त को भोगने नहीं पड़ते। इसलिए भक्ति अनिवार्य है।) मोह यानि अज्ञानतावश भावुक होकर कर्तव्य कर्मों को त्यागना यानि सन्यास लेकर जंगल में चला जाना तामस त्याग है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 8 :- जो यह कहकर सब कर्मों के त्याग का विचार करता है कि*

सब कर्म कष्टदायक हैं, वह राजस त्याग कहा है। उसे उस त्याग का फल कभी नहीं मिलता।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 9 :- हे अर्जुन! कर्तव्य कर्म यानि शास्त्रविहित कर्म करना कर्तव्य है। इस भाव से आसक्ति और फल का त्याग करके किया जाता है, वही सात्विक त्याग माना गया है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 10 :- हे अर्जुन! जो मनुष्य अकुशल कर्मी से द्वेष नहीं करता तथा कुशल कर्मों से प्रभावित होकर उस पर आसक्त नहीं होता। केवल अपना कर्म यानि कार्य ही सिद्ध करता है। वह सत्वगुण प्रधान व्यक्ति संशयरहित बुद्धिमान त्यागी है।*

उदाहरण :- जैसे खिलाड़ी खेलते हैं तो दर्शक अच्छा खेलने वाले के प्रसंशक बनते हैं। दूसरे को धिक्कारते हैं। बुद्धिमान वह है जो खेल देखे ही नहीं, अपने कार्य में व्यस्त रहे।

अन्य उदाहरण :- सिनेमा देखने वाले अपना समय और धन नष्ट करते हैं तथा जो धन कमाने के लिए नाच-कूद करते हैं, उनको अपना मनपसंद अभिनेता या अभिनेत्री मानते हैं, वे मूर्ख हैं।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 11 :- क्योंकि किसी भी शरीरधारी मनुष्य द्वारा सम्पूर्णता से सब कर्मों का त्याग किया जाना संभव नहीं है। जो कर्म प्रतिफल की इच्छा न करके भक्ति कर्म करता है, वह वास्तव में सन्यासी है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 12 :- जो प्राणी शास्त्रविधिरहित कर्म बिना उपरोक्त त्याग भाव से करते हैं, उनको (प्रेत्य) मत्यु के बाद अच्छे-बुरे सर्व फल भोगने पड़ेंगे। जैसे पुण्यों के प्रभाव से पालतु कुत्ता बनकर अच्छी सुविधा लेगा जो उसके पुण्यों का फल होगा। बुरे कर्म के फल रूप में नरक तथा सूअर आदि-आदि जीवों के शरीर प्राप्त करेगा। किंतु जो शास्त्रविधि अनुसार साधना करते हैं। उनको यह कष्ट नहीं होगा।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 13 :- काल ब्रह्म ने कहा कि अब मैं (सांख्ये) वेदांत में कहे विचार यानि मत बताता हूँ। मेरे से भली-भांति सुन।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 14 :- वेदांत में पाँच कारण बताए हैं :- अधिष्ठान, कर्तापन, करण यानि कर्म इन्द्रियों व ज्ञान इन्द्रियों द्वारा किए गए कर्म तथा चेष्टाऐं, ये चार तथा पाँचवां कारण दैव यानि परमात्मा की अदंश्य शक्ति से पूर्व संस्कार से होना। जैसे कहते हैं कि दैव योग से एक तैराक नदी पर उपस्थित था जिसने जल में डूबते बच्चे को बचा लिया।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 15 :- जो व्यक्ति मन, कर्म, वाणी से अथवा न्याय या अन्याय अर्थात् अच्छे-बुरे कर्म जो कुछ भी बताता है, उसके उपरोक्त ये पाँच कारण हैं (पूर्ण संत प्राप्ति के पश्चात् केवल शुभ कर्म प्राणी करता है जैसे नौका बिना खेवट के इधर-उधर भटकती है तो उसके कई कारण होते हैं, हवा का तेज चलना, जल की लहरें, दरिया के पानी का बहाव, जल की मछलियों की उछल-कूद से उत्पन्न पानी की हलचल। जब नौका को खेवट मिल जाता है तो वह उनके वश नहीं रहती, भले ही वे गतिरोध फिर भी रहते हैं। सतगुरू शरण में आने से पहले मानव (स्त्री-पुरूष) की जीवन रूपी नौका संसार रूपी दरिया में बिना खेवट वाली नौका की तरह होती है जो प्रारब्ध कर्मों के कारण सुख-दुःख प्राप्त करके चलती है यानि मानव पूर्व जन्म के कर्मों के भोग प्राप्त करता है। सतगुरू शरण के पश्चात् खेवट वाली नौका की तरह चलती है यानि दुःख समाप्त हो जाते हैं। सुख प्राप्त रहते हैं।इस श्लोक 15 का तात्पर्य यह है।)*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 16 :- इस श्लोक में उस जड़मति व्यक्ति के विषय में कहा है जिसे सतगुरू नहीं मिला। वह स्वयं को सर्व अच्छे-बुरे कर्मों का कर्ता मानता है, उसकी मलीन बुद्धि है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 17 :- इस श्लोक में उस तत्वदर्शी संत के शिष्य का वर्णन है जो*

सर्व कर्म सतगुरू का आदेश मानकर करता है। उसकी स्थिति उस सैनिक जैसी होती है जो अपने राजा की ओर से दूसरे शत्रु राजा की सेना से लड़ता है। वह जो शत्रु के सैनिक मारता है, उसमें वह दोषी नहीं है। यदि स्वयं मर जाता है तो स्वर्ग में जाता है। गीता अध्याय 2 श्लोक 37 में प्रमाण है। इसलिए इस श्लोक 17 में कहा कि वह सैनिक अपनी इच्छा से किसी को नहीं मारता। अपने राजा के आदेश से युद्ध करता है। इसलिए कहा है कि वह लोगों को मारकर भी नहीं मारता। तत्वज्ञान में बताया है कि :-

जो इच्छा कर मारे नहीं, बिन इच्छा मर जाय, कह कबीर तास का, पाप नहीं लगाऐ।।

जैसे कर्तव्य कर्मों में प्रतिदिन पोंचा लगाने में, खाना बनाने के लिए, लकड़ी व गैस आदि से अग्नि जलाने में, कृषि करने में, मजदूरी करने में आदि-आदि दैनिक कार्यों में जो जीव मरते हैं, उसका पाप पूर्ण संत के उपदेशी कबीर परमेश्वर के भक्त को नहीं लगते। अन्य जो भक्ति नहीं करते या गुरू बनाकर शास्त्रों के विपरित साधना करते हैं या अन्य देवी-देवताओं तथा ब्रह्म तक की साधना गुरू बनाकर भी करते हैं। उनको दैनिक व उपरोक्त कार्यों के सब पाप लगते हैं। उन व्यक्तियों के पुण्यों तथा पापों को भिन्न-भिन्न लिखा जाता है। उनको दोनों प्रकार के फल स्वर्ग-नरक व अन्य प्राणियों के शरीर में भोगने पड़ते हैं, परंतु पूर्ण संत के शिष्य कबीर परमेश्वर के भक्त को वे पाप नहीं लगते। जैसे कोई व्यक्ति चालक प्रमाण पत्र (Driving License) के साथ कार-गाड़ी चलाता है। यदि उससे कोई दुर्घटना हो जाती है, तो चालक प्रमाण पत्र वाले को दोषी नहीं माना जाता यदि शराब आदि नशे का सेवन न कर रखा हो तो। इसी प्रकार सतगुरू के शिष्य को कर्तव्य कर्मों के पापों का फल नहीं भोगना पड़ता।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 18 :- ज्ञाता यानि ज्ञान जानने वाला अर्थात् ज्ञानी, ''ज्ञान'' जैसे गीता ज्ञान, इसको जानने वाला ज्ञानी। ज्ञेय का अर्थ है जानने योग्य। जैसे भक्त के लिए ज्ञेय (अध्यात्म ज्ञान द्वारा) परमात्मा है, यह तीन प्रकार की कर्म प्रेरणा है। कर्ता जो कार्य करता है, करण जिस कारण से कर्म किया जा रहा है तथा कर्म जो करना है। वह क्रिया भी तीन प्रकार का कर्म संग्रह है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 19 :- ज्ञान और कर्म तथा कर्ता गुणों के भेद से तीन-तीन प्रकार के ही कहे गए हैं। उनको भी तू मुझसे भली-भांति सुन।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 20 :- जिस ज्ञान से ज्ञानी पथक-पथक सब प्राणियों में एक अविनाशी परमात्मा के भाव को विभाग रहित देखता है यानि सर्व प्राणियों में परमात्मा की सत्ता देखता है। उस ज्ञान को तू सात्विक यानि सच्चा ज्ञान समझ।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 21 :- जो सर्व प्राणियों में परमात्म भाव को भिन्न-भिन्न यानि जीव को कर्ता देखता है, वह राजस ज्ञान जान।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 22 :- जो बिना सिर-पैर का ज्ञान है, वह तामस यानि अज्ञान है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 23 :- कर्मों का भेद = जो कर्म शास्त्रविधि के अनुसार कर्तापन से रहित हैं। भक्ति कर्म का प्रतिफल न चाहकर किया गया कर्म बिना राग-द्वेष के किया गया हो, वह सात्विक कर्म कहा जाता है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 24 :- परंतु जो कर्म फल की इच्छा तथा कठिन परिश्रम से किया जाता है जैसे खड़ा होकर तप करना, कावड़ लाने के लिए पैदल चलकर धार्मिक कर्म शास्त्रविरूद्ध करना राजस कर्म है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 25 :- जो कर्म देखा-देखी बिना परिणाम विचार किया जाता है, वह तामस यानि अज्ञान आधार का कर्म है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 26 :- अहंकार न करने वाला, अधिक संपत्ति संग्रह न करने वाला, धैर्य और उत्साह से युक्त कार्य सिद्ध होने तथा न होने में हर्ष-शोक विकारों से रहित है, वह कर्ता सात्विक कहा जाता है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 27 :- जो राग-द्वेष करने वाला भक्ति को भौतिक सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए करता है अर्थात् कर्मों का फल चाहने वाला लोभी है। दूसरों को स्वार्थवश दुःख देने वाला अशुद्धाचारी और हर्ष-शोक से ग्रस्त है, वह धार्मिक कर्म करने वाला यानि कर्ता राजस कहा गया है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 28 :- जो अयुक्तः यानि भक्ति में नहीं लगा है, प्राकृतः यानि भौतिकवादी स्तब्ध यानि हठी, धुर्त यानि शठ अर्थात् ठग, नैष्कृतिकः यानि नाश करने वाला अर्थात् दूसरों की जीविका को नष्ट करने वाला, विषादी यानि खिन्न रहने वाला, जला-भुना स्वभाव वाला आलसः यानि आलसी और दीर्घ सुत्री यानि कार्य को लटकाने वाला कर्ता तामस यानि मूर्ख कहा है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 29 :- इस श्लोक में कहा है कि बुद्धि तथा धारण शक्ति यानि धृति भी गुणों के अनुसार तीन प्रकार के भेद वाली है, वह सुन।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 30 :- जो तत्वज्ञान के आधार से प्रवृति मार्ग यानि कर्म करते-करते भक्ति करता है तथा उस भक्ति कर्म को फल प्राप्ति की इच्छा से नहीं करता जैसे यदि लड़का उत्पन्न हुआ तो सवामणी लगाऊँगा, नौकरी लगी तो कन्या जिमाऊँगा आदि-आदि की इच्छा बिना किया भक्ति कर्म प्रवृति मार्ग कहा जाता है। निवृति मार्ग यह अकर्म है। जैसे घर त्यागकर जंगल में चले जाना अकर्म है। शास्त्रविधि अनुसार कर्म कर्तव्य कर्म कहा जाता है और जो कर्म नहीं करने योग्य है, वह अकर्म कहा जाता है। उसको भय किन कर्मों से करना चाहिए तथा किन-किन कर्मों से को करने में व्यक्ति को निर्भय रहना चाहिए। इसको तथा बँधन व मोक्ष को यथार्थ जानती है, वह सात्विक बुद्धि है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 31 :- जो दया, धर्म-अधर्म को तथा कर्तव्य-अकर्तव्य को यथार्थ नहीं जानता। उसकी बुद्धि राजस कही है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 32 :- जो तामस यानि अज्ञान से घिरी हुई बुद्धि से अधर्म को धर्म मानता है तथा सर्व अर्थ विपरित लगाता है, वह तामस बुद्धि है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 33 :- धृति यानि धारण शक्ति वह है जो अव्याभीचारिणी धारण शक्ति से यानि एक परमात्मा के अतिरिक्त अन्य देव इष्ट धारण नहीं करती। मन प्राण यानि श्वांस और इन्द्रियों को एक प्रभु की भक्ति में धारण करता है। वह धृति सात्विक है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 34 :- परंतु हे पृथु पुत्र अर्जुन! फल की इच्छा वाला मनुष्य जिस धारण शक्ति से अत्यंत आसक्ति धर्म, अर्थ और कर्मों को धारण करता है, वह धृति राजसी है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 35 :- हे पार्थ! दुष्ट बुद्धि वाला मनुष्य जिस धारण शक्ति के द्वारा निद्रा, भय, चिंता और दुःख को तथा उन्मतता यानि बकवाद को भी नहीं छोड़ता अर्थात् धारण किए रहता है। वह धारण शक्ति तामसी है।*

''भक्तों का वर्तमान विष के तुल्य होता है और परिणाम अमत के तुल्य होता है''

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 36-37 :- हे भरत श्रेष्ठ अर्जुन! तीन प्रकार के सुख को भी तू मुझसे सुन। भक्तों का प्रारम्भिक जीवन कष्टमय होता है क्योंकि वे परमात्मा की भक्ति, सेवा, दान आदि के अभ्यास में कष्ट उठाते हैं। जिस कारण से उनका वर्तमान जीवन विष के तुल्य दिखाई देता है, परंतु परिणाम में अमत के तुल्य होता है क्योंकि परमात्मा की साधना से अमर लोक को प्राप्त होकर सदा सुखी रहता है, यह सात्विक सुख कहा गया है।*

''जो भक्ति नहीं करते उनका वर्तमान अमत के तुल्य होता है और परिणाम विष के तुल्य होता है''

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 38 :- जो व्यक्ति पूर्व संस्कार से प्राप्त सुख यानि विषय भोग इन्द्रियों के भोग के संयोग से होता है, भोगकर आनंद मनाता है। उसका वर्तमान प्रारम्भिक जीवन अमत के तुल्य प्रतीत होता है, परंतु परिणाम में विष के तुल्य है क्योंकि उसने अपने पूर्व जन्म के शुभ कर्मों को खर्च कर दिया। भविष्य के लिए भक्ति, दान, सेवा की नहीं, इसलिए नरक भोगेगा। अन्य प्राणियों के शरीरों में कष्ट पर कष्ट असँख्यों जन्मों तक कष्ट भोगेगा। इस तरह का सुख राजस कहा जाता है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 39 :- जो व्यक्ति पूर्व संस्कार से प्राप्त सुख को भी ठीक से नहीं भोगता। जैसे कंपण (कंजूस) व्यक्ति के पास धन होता है तो भी उसका आनंद नहीं लेता। शुभ कर्म, भक्ति, सेवा, दान भी नहीं करता। उसका जीवन प्रारम्भ, वर्तमान तथा परिणाम में भी कष्टमय होता है। वह तामस सुख कहा जाता है। क्योंकि वह केवल इस बात से सुख मानता है कि मेरे पास करोड़ों रूपये हैं।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 40 :- इस संसार में सर्व देवता तथा मानव व दानव तीनों गुणों के प्रभाव से प्रभावित हैं यानि रजगुण ब्रह्मा जी के तथा सतगुण विष्णु के तथा तमगुण शिव जी के शरीर से गुणों की अदश्य शक्ति निकल रही है। जैसे फूलों से सुगंध, मिर्च से निकलने वाली जलन प्रभाव करती है। उन तीनों गुणों के प्रभाव से वे स्वयं भी प्रभावित हैं। काल ब्रह्म के अन्य सर्व देवता व प्राणी भी प्रभावित हैं। सब कर्म करने के लिए विवश हैं।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 41 :- हे परन्तप अर्जुन! ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्यों तथा शुद्रों के कर्म स्वभाव से उत्पन्न गुण के द्वारा बाँटे गए हैं।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 42 :- ब्राह्मण के कर्तव्य संसारिक कर्म तथा गुण इस प्रकार हैं :- शमः यानि संयम, दमः यानि इच्छाओं का दमन, तपः यानि स्वधर्म के पालन में कष्ट सहना, शौचम् यानि शरीर को स्वच्छ रखना, क्षान्तिः यानि दूसरों के अपराधों को क्षमा करना, आर्जवम् यानि सत्य निष्ठा, सरल स्वभाव, परमात्मा में श्रद्धा, ज्ञानम् यानि वेद शास्त्रों के ज्ञान को ठीक से समझना तथा विज्ञानम् यानि तत्वज्ञान को तत्वदर्शी से समझना जैसा गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में निर्देश है। ये उपरोक्त कर्म एक ब्राह्मण यानि आध्यात्मिक गुरू के स्वाभाविक कर्म हैं।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 43 :- क्षत्रीय के शरीर में किए जाने वाले कर्तव्य कर्म :- शूरवीरता, तेज, धतिः यानि धैर्य, समझदारी और युद्ध में न भागना, दान देना, क्षत्रीय के कर्म हैं।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 44 :- वैश्य के स्वाभाविक कर्तव्य कर्म :- खेती, गोपालन और*

क्रय-विक्रय यानि व्यापार वैश्य के स्वाभाविक कर्म हैं।

शुद्र के स्वाभाविक कर्म :- जातियों का विभाजन :- सर्वप्रथम संष्टि में कोई जाति नहीं थी। एक ही कुल के व्यक्तियों ने अपनी क्षमता के अनुसार कार्य बाँटे तथा उनको करने लगे। आगे चलकर उनकी संतान भी वही कार्य करने लगी। इस प्रकार जाति बनी। शुद्र वह वर्ग था जो घर की साफ-सफाई, झाड़ू-पोंचा करता था। अन्य व्यक्ति उसको अनाज व कपड़ा मेहनताना रूप में देने लगे। फिर रूपयों का चलन शुरू हुआ तो मजदूरी रूप में रूपये देना शुरू हुआ। वर्तमान में कोई शुद्र नहीं जाना जाता, न क्षत्रीय भिन्न रहा है क्योंकि समय के अनुसार सैना ने क्षत्रीय का स्थान ले लिया है जिसमें सब जातियों के युवा काम कर रहे हैं।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 45 :- अपने-अपने स्वाभाविक कर्मों को करते हुए मनुष्य सतगुरू से दीक्षा लेकर जिस प्रकार से मनुष्य सिद्धि यानि परमात्मा की भक्ति से प्राप्त शक्ति को प्राप्त होता है, वह सुन।*

''गीता ज्ञान देने वाले से अन्य पूर्ण परमात्मा का ज्ञान''

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 46 :- अध्याय 18 के श्लोक 46 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य उस परमेश्वर की भक्ति करने को कहा है। जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है। जिस परमेश्वर से यह समस्त जगत व्याप्त है यानि प्रकट व पालित है। परमेश्वर की अपने-अपने स्वाभाविक कर्म करते-करते अभ्यर्च्च यानि पूजा करके मनुष्य सिद्धि यानि परमात्मा की शक्ति को प्राप्त कर लेता है। भक्ति की शक्ति यानि सिद्धि शास्त्र अनुकूल भक्ति कर्मों से प्राप्त होती है। सिद्धि के द्वारा साधक अपने इष्ट देव यानि पूजित परमेश्वर को प्राप्त होता है।*

''शुद्र भी भगवान की भक्ति का अधिकारी है''

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक नं. 47 :- विशेष :- मेरे (रामपाल दास के) अतिरिक्त सर्व अनुवादकर्ताओं ने वही गलती इस श्लोक 47 के अनुवाद में दोहराई है जो गीता अध्याय 3 के श्लोक 35 में कर रखी है।*

अन्य अनुवादकों ने श्लोक 47 का अनुवाद इस प्रकार किया है जो अनुचित (गलत) है :- अच्छी प्रकार आचरण किए हुए दूसरे के धर्म से यानि धार्मिक साधना की क्रियाओं से गुणरहित यानि शास्त्रविधि विरूद्ध भी अपना धर्म यानि धार्मिक साधना श्रेष्ठ है क्योंकि स्वभाव से नीयत किए स्वधर्म के भक्ति कर्म को करता हुआ साधक पाप को प्राप्त नहीं होता।

विचार करें :- यदि इस अध्याय 18 के श्लोक 47 तथा अध्याय 3 के श्लोक 35 का यह अनुवाद उचित है तो फिर तो गीता के शेष सर्व ज्ञान की आवश्यकता ही समाप्त हो जाती है जिनमें कहा है कि (गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में) :- जो साधक शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है यानि मनमानी साधना करता है तो उसको न तो सुख प्राप्त होता है, न सिद्धि यानि आध्यात्मिक शक्ति जो मोक्ष में सहायक होती है तथा जिससे संसारिक कार्य सिद्ध होते हैं, प्राप्त होती है और न ही उसकी गति यानि मुक्ति होती है।(16/23)

इससे तेरे लिए कर्तव्य यानि जो भक्ति कर्म करने चाहिऐं और अकर्तव्य यानि जो भक्ति कर्म नहीं करने चाहिऐं, उनके निर्णय के लिए शास्त्र ही प्रमाण हैं।(16/24)

गीता अध्याय 15 के श्लोक 20 में कहा है कि गीता भी एक शास्त्र है। गीता शास्त्र के अध्याय

9 श्लोक 20-23 तथा 25, अध्याय 7 के श्लोक 12-15 तथा 20-23 में कहा है कि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी को इष्ट मानकर भक्ति करने वालों का ज्ञान इन्हीं से मिलने वाली क्षणिक सुख के द्वारा हरा जा चुका है। वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझे यानि गीता ज्ञान दाता को भी नहीं भजते।

अन्य देवी-देवताओं को मैंने ही कुछ शक्ति दे रखी है जिससे उनके साधकों को कुछ लाभ प्राप्त होता है, परंतु उन (अल्पमेधसाम्) अल्पबुद्धि वालों यानि मूर्खों का वह फल नाशवान है। देवताओं के भक्त देवताओं को प्राप्त होते हैं। पितरों की पूजा करने वाले यानि श्राद्ध आदि-आदि कर्मकाण्ड करने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं यानि पितर बनते हैं। भूतों की पूजा करने वाले भूत बनते हैं। गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 18 में गीता ज्ञान देने वाले ने अपनी साधना से होने वाली गति यानि मुक्ति को भी अनुतमाम् गतिम् यानि अश्रेष्ठ गति कहा है। फिर गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में अपने से अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है तथा बताया है कि उस परमेश्वर की कपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम यानि अमर लोक को प्राप्त होगा। गीता शास्त्र के गूढ़ रहस्य को न समझकर अनुवादकों ने गीता अध्याय 18 श्लोक 47 तथा गीता अध्याय 3 श्लोक 35 का गलत अनुवाद किया है।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 47 का यथार्थ अनुवाद :- (विगुणः) गुण रहित (स्वनुष्ठितात्) स्वयं बनाया मनाना अर्थात् शास्त्रविधि रहित धार्मिक अनुष्ठान अच्छी प्रकार साज-बाज के साथ आचरण किए हुए (पर धर्मात्) दूसरे के धर्म यानि धार्मिक पूजा से (स्वधर्मः) अपना शास्त्रविधि अनुसार धार्मिक कर्म-पूजा (श्रेयान्) श्रेष्ठ है। (स्वभावनियतम्) अपने वर्ण के स्वाभाविक कर्म अर्थात् जो भी क्षत्रीय, वैश्य, ब्राह्मण तथा शुद्र वर्ण में उत्पन्न हैं, उन स्वाभाविक (कर्म) कर्मों को (कुर्वन) करता हुआ भक्ति करने से (कल्बिषम्) पाप को (न आप्नोति) प्राप्त नहीं होता।*

विशेष :- कर्मों के पाप किनको नहीं लगते, विस्तत जानकारी पढ़ें इसी अध्याय 18 के श्लोक 17 के सारांश में। पाठकों को अन्य अनुवादकर्ता या उनके पाठक भ्रमित करने के लिए कह सकते हैं कि इस अध्याय 18 के श्लोक 47 में अपने धर्म का भावार्थ केवल चारों वर्णों के कर्मों से है। याद रखें इसी अध्याय 18 के श्लोक 46 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर की पूजा अपने स्वाभाविक कर्म यानि क्षत्रीय-वैश्य, ब्राह्मण तथा शुद्र वाले कर्म करते-करते मनुष्य सिद्धि को प्राप्त करता है, जिस परमेश्वर ने सर्व प्राणियों की उत्पत्ति की है तथा जिससे यह सम्पूर्ण संसार व्याप्त है यानि धारण किया हुआ है। श्लोक 47 में भी धार्मिक भक्ति कर्मों का वर्णन है।

❖ *अध्याय 18 श्लोक 48 :- इस श्लोक में संसारिक कर्मों के विषय में कहा है कि जो व्यक्ति जिस वर्ण (क्षत्रीय, वैश्य, ब्राह्मण, शुद्र) में उत्पन्न है, उसके कर्म में पाप भी समाया है। जैसे ब्राह्मण हवन आदि करता है। उसमें जलने वाली अग्नि में सूक्ष्म जीवों की हिंसा होती है। वैश्य अपने खेत की पथ्वी को हल या ट्रैक्टर से गुड़ाई करता है। उससे जमीन में कीड़े-मकोड़े यानि भिन्न-भिन्न प्रकार के जीव मरते हैं।*

❖ *क्षत्रीय युद्ध में हिंसा करता है तथा सर्व वर्णों के व्यक्ति भोजन तैयार करते हैं, उसमें भी जीव हिंसा होती है।*

❖ *शुद्र साफ-सफाई आदि-आदि सेवा करता है। झाड़ू से सूक्ष्म जीव मरते हैं। इसलिए जैसे अग्नि में धुँआ होता है। धुँऐ के कारण अग्नि जलाना नहीं छोड़ा जा सकता। इसी प्रकार सर्व वर्णों के कर्मों में अग्नि में धुँऐ की तरह पाप भी होते हैं, परंतु ये कर्म शास्त्रोक्त तथा परमात्मा के आदेश होने से*

त्यागे नहीं जा सकते। इनको करते-करते परमात्मा की भक्ति पूर्ण सतगुरू यानि तत्वदर्शी संत से दीक्षा लेकर करने से पाप कर्म नहीं लगते। जैसे चालक प्रमाण पत्र वाले चालक से यदि दुर्घटना हो जाती है तो वह सीधा दोषी नहीं होता। यह नहीं कहा जा सकता कि इसको गाड़ी चलानी नहीं आती। जिसके पास ड्राईविंग लाईसेंस नहीं है, यदि उससे दुर्घटना हो जाए तो वह सीधा दोषी है।

विशेष :- इस विषय में अधिक जानकारी इसी अध्याय 18 के श्लोक 17 में पढ़ें।

अध्याय 18 के श्लोक 46, 47, 48 से यह भी सिद्ध होता है कि परमात्मा की भक्ति शुद्र भी कर सकता है। उसका भी मोक्ष संभव है।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 49 :- इस श्लोक में भी गीता ज्ञान दाता से अन्य परमात्मा की भक्ति करने वाले की स्थिति बताई है। इसलिए उपरोक्त श्लोक 47 में भक्ति करने वाले धार्मिक कर्मों का ज्ञान है। इस श्लोक में कहा है सर्वत्र आसक्ति रहित बुद्धि वाला स्पहारहित यानि संग्रह न करने वाला तथा बुरे कर्मों को न करने वाला जिसने अपनी आत्मा को ज्ञान से अनुचित कर्मों को न करने के लिए तैयार कर लिया है। वह आत्म विजयी तत्वज्ञान के द्वारा सन्यास की परिभाषा जानकर कर्म न त्यागकर बुराईयाँ त्यागकर भक्ति करने वाले द्वारा (पराम्) काल ब्रह्म से अन्य श्रेष्ठ मुक्ति को प्राप्त होता है जिससे (नैष्कर्म्य सिद्धम्) सर्व पाप कर्म नष्ट होने पर मुक्ति होती है। उस सिद्धि को प्राप्त होता है। नैष्कमर्य मुक्ति को प्राप्त प्राणी को सतलोक प्राप्त होता है। सत्यलोक में कर्म नहीं करने पड़ते। सर्व सुविधाऐं मुफ्त में प्राप्त होती हैं। गीता अध्याय 3 श्लोक 4 में भी प्रमाण है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 50 :- जो कि ज्ञान की श्रेष्ठ निष्ठा है याानि तत्वज्ञान का जो तात्पर्य है। उस सिद्धि यानि भक्ति के कारण प्राप्त आध्यात्मिक शक्ति को जिस प्रकार से प्राप्त होकर साधक (ब्रह्म) परमात्मा को (प्राप्तः) प्राप्त होता है। उस ज्ञान को हे कुन्तीपुत्र! तू मुझसे समझ।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 51-53 :- इसमें बताया है कि तत्वज्ञान से विशुद्ध हुई बुद्धि से युक्त तत्वदर्शी संत का शिष्य खाने-पीने में संयम रखता है। विकारों से परहेज करता है। अच्छी धारणा वाला तथा एकान्त प्रिय होता है। संयमी बनकर बोलने में भी संयम रखता है। राग-द्वेष से दूर, काम, क्रोध, घमण्ड, अहंकार, परिग्रह यानि संग्रह का आदि का परित्याग करके निरंतर परमात्मा के विषय में विचार यानि ध्यान रखकर ध्यान यज्ञ करता हुआ शांत स्वभाव वाला साधक गीता ज्ञान दाता से अन्य सच्चिदानंद घन ब्रह्म मय यानि पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने के लिए योग्य होता है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 54 :- परमात्मा प्राप्ति के योग्य हुआ साधक न तो हानि होने पर शोक करता है, न इस संसार की वस्तुओं की इच्छा करता है। सर्व प्राणियों के प्रति समभाव रखने वाला मेरे वाली भक्ति से (पराम्) अन्य वास्तविक भक्ति को प्राप्त हो जाता है।*

प्रथम मंत्र जो सात नाम का है, उसके जाप से साधक गीता अध्याय 18 श्लोक 51-53 में बताए विकार रहित हो जाता है। उसके पश्चात् दो नाम का जाप दिया जाता है। उसमें एक ओम् (ॐ) नाम भी जाप करने का दिया जाता है। यह काल ब्रह्म यानि क्षर पुरूष अर्थात् गीता ज्ञान देने वाले की वास्तविक भक्ति का नाम है। इसलिए इस अध्याय 18 के श्लोक 54 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने अपनी भक्ति कहा है। अपनी भक्ति से अन्य वास्तविक भक्ति की प्राप्ति योग्य होने की बात कही है। इसी अध्याय 18 के श्लोक 56 में स्पष्ट किया है कि मेरी इस भक्ति यानि ॐ नाम के जाप के करने वाली की रक्षा मैं करता हूँ। मेरे संरक्षण में मेरे में भी श्रद्धा रखने वाला मेरी कपा यानि ॐ नाम की भक्ति के सहयोग से अविनाशी धाम को प्राप्त होता है।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 55 :- तत्वज्ञानी संत के सम्पर्क में आने से उसके द्वारा दिए ज्ञान से*

की गई भक्ति से दिव्य दृष्टि खुल जाने से साधक मेरी क्षमता से परिचित हो जाता है। वह जान लेता है कि मैं (काल ब्रह्म) जो हूँ जितनी शक्ति वाला हूँ। उस भक्ति से मुझे तत्व से ठीक-ठीक जानकर कि मैं काल हूँ, नाशवान हूँ। मेरी भक्ति से प्राप्त होने वाली गति यानि मुक्ति अश्रेष्ठ (अनुत्तम) है। फिर वह तत्काल ही उस पूर्ण परमात्मा के परम पद में यानि सत्यलोक में (विशते) प्रवेश पाता है जो परमेश्वर गीता अध्याय 18 श्लोक श्लोक 46 में बताया है।

भावार्थ :- उस परमात्मा में प्रवेश का भाव है कि दो नाम के जाप की भक्ति अधिक करने के पश्चात् साधक को ''सार नाम'' दिया जाता है जो परमेश्वर की सत्य भक्ति में भक्त प्रवेश करता है यानि दाखिला (Addmission) लेता है। उसके पश्चात् सत्यलोक में स्थाई स्थान प्राप्त करता है।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 56 :- इसमें स्पष्ट है कि काल ब्रह्म ने कहा है कि मेरी वास्तविक भक्ति मंत्र के जाप के प्रसाद यानि सदा से मेरे संरक्षण में अपने-अपने वर्ण वाले कर्म करता हुआ भी (शाश्वत् अव्ययम् पदम् आप्नोति) सनातन अविनाशी पद यानि अमर लोक प्राप्त होता है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 57-60 :- इन चारों श्लोकों में काल ब्रह्म यानि गीता ज्ञान देने वाला अर्जुन को युद्ध के लिए कह रहा है कि सर्व कर्मों को तू मुझ पर छोड़कर मेरे संरक्षण में रहकर मेरी बातों में चित्त रख। मेरे में चित्त रखने वाला होकर तू सर्व दुःखों यानि कर्म बंधन रूपी किले समान संकट को आसानी से पार कर जाएगा। यदि मेरी बातों पर ध्यान नहीं देगा तो नष्ट हो जाएगा।*

❖ *जो तू कह रहा है कि मैं युद्ध नहीं करूँगा, तेरा यह निश्चय मिथ्या है क्योंकि तेरा स्वभाव तुझे जबरदस्ती तुझे युद्ध कर्म लगा देगा।(18/59)*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 60 :- हे कुन्तीपुत्र! जिस अपने क्षत्रीय के कर्म को मोह के वश हुआ नहीं करना चाहता, उसको अपने पूर्व जन्म के संस्कार से बँधा हुआ परवश होकर करेगा।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 61-62 :- इन दोनों श्लोकों में गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा का वर्णन है। उसी परमात्मा का वर्णन इसी अध्याय 18 के श्लोक 46 में किया है।*

गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! शरीर रूप यंत्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अन्तर्यामी परमेश्वर उनके कर्मानुसार भ्रमण करवाता हुआ उनके हृदय में (तिष्ठति) विराजमान है यानि बैठा है।(18/61)

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 62 :- हे भारत! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परम शांति तथा सनातन परम धाम यानि सत्यलोक को प्राप्त होगा। इसी परमेश्वर की शरण में जाने के लिए इसी अध्याय 18 के श्लोक 66 में कहा है। इसी परमेश्वर को श्लोक 64 में गीता ज्ञान देने वाले ने अपना इष्ट देव यानि पूजित परमेश्वर बताया है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 63 :- श्रीमद्भगवत गीता में कुल अठारह अध्याय हैं। यह श्लोक नं. 63 इस अंतिम अध्याय का है। इसमें गीता ज्ञान देने वाले ने अर्जुन को सम्पूर्ण गीता के ज्ञान की याद दिलाई है। कहा है कि हे अर्जुन! (इति) इस प्रकार (गुह्यतात्) गोपनीय से भी (गुह्यतरम्) अति गोपनीय (ज्ञानम्) गीता शास्त्र का ज्ञान (मया) मेरे द्वारा (ते) तुझे (आख्यातम्) कह दिया है। अब तू (एतत्) इस गूढ़ गीता शास्त्र के ज्ञान को (अशेषेण) पूर्णतय (विमृश्य) भली-भांति विचार कर जैसा चाहे वैसा कर।*

भावार्थ :- गीता का यह अठारहवाँ अध्याय अंतिम अध्याय है तथा इस अध्याय के अंत के श्लोक हैं। गीता ज्ञान दाता ने इस अध्याय 18 के श्लोक 63 में कहा है कि मैंने तेरे को गीता शास्त्र में गोपनीय से भी अति गोपनीय ज्ञान कह दिया है। मैं काल हूँ।(11/32) मैं अपने वास्तविक स्वरूप

में कभी किसी के समक्ष प्रकट नहीं होता यानि छिपा रहता हूँ। यह मेरा (अव्ययम्) अविनाशी (अनुतमम्) घटिया विधान है। मैं अपनी योगमाया यानि सिद्धि शक्ति से छिपा रहता हूँ।(अध्याय 7 श्लोक 24-25)

❖ *जो साधक रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव को इष्ट मानकर भक्ति करने में आरूढ़ है। उनका ज्ञान त्रिगुण माया यानि इन तीनों देवताओं से मिलने वाले क्षणिक नाशवान लाभ के द्वारा हरा जा चुका है। वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मेरी भक्ति नहीं करते। सब देवी-देवताओं को मैंने कुछ शक्ति दे रखी है, उसी से उनके पुजारियों को लाभ मिलता है। परंतु उन अल्पबुद्धि वालों यानि मूर्खों का वह लाभ नाशवान है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। मेरे भक्त मुझे प्राप्त होते हैं।(गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15, 20-23)*

❖ *गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 10 श्लोक 2 में अपने को नाशवान यानि जन्म-मरण के चक्र में सदा रहने वाला बताया है। कहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ।*

❖ *गीता अध्याय 8 श्लोक 5 तथा 7 में अपनी भक्ति करने को कहा है तथा युद्ध भी कर, निःसंदेह मुझे प्राप्त होगा, परंतु जन्म-मत्यु दोनों की बनी रहेगी। अपनी भक्ति का मंत्र अध्याय 8 के श्लोक 13 में बताया है कि (माम् ब्रह्म) मुझ ब्रह्म की भक्ति का केवल एक ओं (ॐ) अक्षर है। इस नाम का जाप अंतिम श्वांस तक करने वाले को इससे मिलने वाली गति यानि ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 के श्लोक 16 में स्पष्ट किया है कि ब्रह्मलोक में गए साधक भी पुनरावर्ती में हैं यानि ब्रह्मलोक में गए भक्त भी लौटकर संसार में जन्म लेते हैं। उनका भी जन्म-मरण का चक्र सदा बना रहेगा। युद्ध जैसे भयंकर कर्म भी करने पड़ेंगे। जिस कारण से काल ब्रह्म के पुजारियों को न तो शांति मिलेगी, न सनातन परम धाम जहाँ जाने के पश्चात् साधक कभी लौटकर संसार में नहीं आते। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 46 तथा 61-62 तथा 66 में कहा है कि हे भारत! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा जो गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में मेरे से अन्य परम अक्षर ब्रह्म है। उस परमेश्वर की कपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा। अध्याय 18 के श्लोक 46 में यह भी स्पष्ट किया है कि वह परम अक्षर ब्रह्म वही परमात्मा है जिसने सर्व प्राणियों की उत्पत्ति की है तथा जिससे यह सम्पूर्ण जगत व्याप्त है। उसकी भक्ति अपने-अपने संसारिक स्वाभाविक वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य तथा शुद्र) के कर्म करता हुआ भी साधक परमगति को प्राप्त हो जाता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वदर्शी संत से तत्वज्ञान प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् लौटकर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर से संसार रूप वक्ष की प्रवति विस्तार को प्राप्त हुई है यानि जिस परमेश्वर ने संसार की रचना की है। (तम् एव) उसी (आद्यम् पुरूषम्) आदि यानि सनातन परमेश्वर की (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ। गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 17 के श्लोक 23 में यह भी स्पष्ट किया है कि उस परम अक्षर ब्रह्म यानि सच्चिदानंद घन ब्रह्म की भक्ति का मंत्र तीन नामों का ॐ-तत्-सत् है। इसका स्मरण करके उसकी प्राप्ति होती है। अब तू विचार कर ले कि मेरी शरण में रहना है या उस परमेश्वर की शरण में जाना है। जो उचित लगे, वह कर।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 64 :- इस श्लोक में भी स्पष्ट किया है कि गीता ज्ञान देने वाले का ''इष्टः'' यानि पूजित परमेश्वर भी वही परम अक्षर ब्रह्म यानि परमेश्वर ही है। कहा है कि हे अर्जुन!*

अति गोपनीय से भी गोपनीय गीता ज्ञान तुझे बता दिया, अब सम्पूर्ण गोपनीय से अति गोपनीय मेरे वचन सुन जो तेरे हित में कहूँगा कि (इति) यह परमेश्वर जो श्लोक 61-62, 46 में ऊपर बताया है जिसकी शरण में सर्व भाव से जाने को कहा है जो सर्व सष्टि का उत्पत्तिकर्ता है। (मे) मेरा (दृढ़म्) पक्के तौर पर (इष्टः) पूजित है यानि मेरा पूज्य देव भी यही है। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 से भी स्पष्ट है कि मैं उसी की शरण में हूँ।

विशेष :- मेरे (रामपाल दास के) अतिरिक्त सब अनुवादकों ने इस अध्याय 18 के श्लोक 64 में ''इष्टः'' शब्द का अर्थ प्रिय किया है। जबकि इन्हीं अनुवादकों ने अध्याय 18 के श्लोक 70 में ''इष्टः'' का अर्थ ''पूजित'' किया है। यहाँ श्लोक 64 में भी पूजित करना चाहिए था। यदि अन्य अनुवादकों की बात करें जिन्होंने इस अध्याय 18 के श्लोक 64 का अनुवाद इस प्रकार किया है :- हे अर्जुन! सम्पूर्ण गोपनीय से भी अति गोपनीय मेरे परम रहस्ययुक्त वचन को फिर सुन। तू मेरा (दृढ़म् इष्टः) अतिशय प्रिय है। इससे यह परम हितकारी वचन मैं तुझे कहूँगा। यह अनुवाद है अन्य अनुवादकों का अध्याय 18 श्लोक 64 का है। यदि यह ठीक मानें तो आगे गीता अध्याय 18 श्लोक 65 में वही बात दोहराई है जो अध्याय 8 के श्लोक 5 तथा 7 में कही है कि मुझ में मन वाला हो मेरा भक्त बन मुझको प्रणाम कर, मुझे ही प्राप्त होगा। मैं सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ। विचार करें कि यह वचन सम्पूर्ण गोपनीय से भी अतिशय गोपनीय कैसे हुआ? यह पहले कहा जा चुकाथा। गीता के विशेष गोपनीय ज्ञान के विषय में अध्याय 18 श्लोक 63 में कह ही दिया था। फिर और अति गोपनीय ज्ञान संबंधित वचन कौन-सा शेष रहा था। जो मैंने (रामपाल दास ने) गीता अध्याय 18 श्लोक 64 का अर्थ किया है, वह सत्य है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में भी गीता अध्याय 18 श्लोक 62 वाला ही वचन है कि उस परमेश्वर की शरण में जा। जो श्लोक 63 से पहले वर्णन आ चुका है जो गोपनीय से गोपनीय गीता ज्ञान का हिस्सा है। गीता अध्याय 18 श्लोक 63 में गोपनीय ज्ञान यानि जो गीता का ज्ञान पूर्व में दिया जा चुका है, के विषय में है। इस अध्याय 18 के श्लोक 64 में सम्पूर्ण गोपनीय से भी अति गोपनीय ओर मेरे परम वचन सुनने को कहा है। वे वचन हैं कि वह परम अक्षर ब्रह्म यानि परमेश्वर मेरा भी निश्चित रूप से इष्ट देव यानि पूज्य परमेश्वर है। मैं गीता ज्ञान दाता भी उसी की शरण में हूँ। उसी की भक्ति करता हूँ।

विशेष प्रमाण :- एक समय श्री गोरखनाथ सिद्ध से कबीर परमेश्वर जी की ज्ञान गोष्ठी हुई थी जो आप जी इसी अध्याय 18 के सारांश में आगे पढ़ेंगे। जब गोरखनाथ जी परमेश्वर कबीर जी से ज्ञान तथा सिद्धि में पूर्ण रूप से हार गए तो प्रश्न किया कि हे कबीर जी! आप कौन प्रभु हो? मैं आपकी शक्ति और ज्ञान से बहुत प्रभावित हूँ। तब परमेश्वर कबीर ने कविता रूप में शब्द कहा। गोरखनाथ जी तमगुण शिव के पुजारी थे तथा परमात्मा को निराकार यानि अलख निरंजन ज्योति स्वरूप मानते थे। ''अलख निरंजन'' का नारा लगाते थे। उसी ज्योति स्वरूप अलख निरंजन को समर्थ परमात्मा मानते थे। परमेश्वर कबीर जी ने शब्द में कहा कि अवधु यानि अवधूत! जो साधक केवल एक लंगोट या छोटा वस्त्र गुप्तांगों के ऊपर बाँधते हैं। शरीर पर कोई अन्य वस्त्र धारण नहीं करते, उन्हें संत भाषा में अवधूत कहते हैं। अपभ्रंश होकर पूर्व में सब साधक उस वेशधारी को ''अवधु'' कहते थे। हालांकि ज्ञान गोष्ठी के समय सम्पूर्ण शरीर पर वस्त्र धारण किए हुए थे, कारण यह था कि वे यह नहीं बताना चाहते थे कि मैं गोरखनाथ हूँ, परंतु परमेश्वर कबीर जी तो अंतर्यामी थे। वे पहचान चुके थे कि ये गोरखनाथ जी हैं। तब कहा था कि :-

शब्द :– अवधु! अविगत से चल आया, मेरा भेद मर्म ना पाया।। टेक।।

शब्दार्थ :- हे अवधु! मैं उस सत्यलोक स्थान से सशरीर चलकर आया हूँ जिसका मेरे अतिरिक्त किसी को ज्ञान नहीं है। उस गति से कोई परिचित नहीं है। इसलिए उस स्थान यानि सत्यलोक को ''अविगत'' कहा है।

ना मेरा जन्म ना गर्भ बसेरा, बालक बन दिखलाया।
काशी नगर जल कमल पर डेरा, तहाँ जुलाहे ने पाया।।
मात–पिता मेरे कुछ नांही, ना मेरे घर दासी (पत्नी)।
जुलहे का सुत आन कहाया, जगत करे मेरी हाँसी।।
पाँच तत का धड़ ना मेरा, जानूँ ज्ञान अपारा।
सत्य स्वरूपी नाम साहेब का, सोई नाम हमारा।।
अधर द्विप गगन गुफा में, तहाँ निज वस्तु सारा।
तेरा ज्योति स्वरूपी अलख निरंजन, धरता ध्यान हमारा।।
हाड मास लहू ना मेरे, जाने सतनाम उपासी।
तारण तरण अभय पद दाता, हूँ कबीर अविनाशी।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने अपनी अमर कथा स्वयं ही बताई है कि मेरा जन्म किसी माता के गर्भ से नहीं हुआ। मैं लीला करने के लिए सतलोक यानि सनातन परम धाम से चलकर आया हूँ। काशी शहर में लहर तारा नामक तालाब में कमल के फूल पर नवजात शिशु का रूप धारण करके विराजमान हुआ हूँ। वहाँ से नीरू जुलाहा उठा ले आया। जिस कारण से मुझे जुलाहा (धाणक) कहकर पुकारते हैं। मजाक करते हैं कि यह जुलाहा अशिक्षित है, यह क्या जाने वेद-शास्त्रों के ज्ञान को? इनको यह नहीं पता कि मेरा शरीर पाँच तत्व से नहीं बना है। मैं वेद-शास्त्रों वाला ज्ञान तथा जो सूक्ष्मवेद वाला जो ज्ञान इनमें है, उसे भी जानता हूँ। ऊपर आकाश में एक भंवर गुफा में सोहं की धुन यानि ध्वनि हो रही है तथा निज नाम रूपी विशेष वस्तु भी पास है। मैं तारण-तारण यानि सर्व का मोक्ष करने वाला हूँ। तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करने वाला अविनाशी परमेश्वर हूँ। जिस ज्योति स्वरूप अलख निरंजन काल ब्रह्म का आप गुणगान करते हो, वह भी मेरा ध्यान करता है यानि मेरी शरण में है। मैं उसका इष्ट देव हूँ। मेरा नाम वेदों में कविर्देव है। पथ्वी पर उसको अपभ्रंश करके कबीर साहेब कहते हैं।

❖ ***अध्याय 18 श्लोक 65 :- इसमें गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि यदि मेरी शरण में रहना चाहता है तो मुझमें मन वाला हो, मेरा भक्त बन। मेरा पूजन करने वाला हो, मुझे नमस्कार कर, मुझे ही प्राप्त होगा। मैं तेरे से सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ, तू मुझे प्रिय है।***

❖ ***अध्याय 18 श्लोक 66 :- इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने अर्जुन से कहा है कि यदि उस परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जाना है तो एक शर्त है :-***

श्लोक 66 का यथार्थ अनुवाद :- परम अक्षर ब्रह्म यानि सच्चिदानंद घन ब्रह्म की प्राप्ति के लिए गीता अध्याय 17 के श्लोक 23 वाला तीन नाम का जाप करना होता है। जो ॐ (ओं), तत्, सत् तीन अक्षर हैं। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरूषों का वर्णन है :- क्षर पुरूष, यह काल ब्रह्म गीता ज्ञान दाता है। इसकी साधना का नाम ॐ (ओं) एक अक्षर है जिसके विषय में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने स्वयं गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में कहा है। दूसरा अक्षर पुरूष है, इसकी भक्ति का मंत्र तत् है जो सांकेतिक है। तीसरा उत्तम पुरूष जो जो क्षर तथा अक्षर पुरूष दोनों से

अन्य है, यह परम अक्षर पुरूष है जिसकी जानकारी गीता अध्याय 8 के श्लोक 3 में गीता ज्ञान दाता ने दी है तथा इसी के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 8-10 तथा 20-22 में भी बताई है। यह परमात्मा कहा जाता है जो तीनों लोकों (क्षर पुरूष के इक्कीस ब्रह्माण्डों का काल लोक, अक्षर पुरूष के सात शंख ब्रह्मण्डों का अक्षर लोक तथा परम अक्षर पुरूष के असँख्यों ब्रह्मण्डों का सनातन परम धाम यानि सत्यलोक) में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। तत्वदर्शी संत पूर्ण मोक्ष का मंत्र ॐ-तत्-सत् स्मरण करने को शिष्य को दीक्षा में देता है। जो ॐ (ओम्) नाम के जाप की साधना की कमाई यानि भक्ति धन त्रिकुटी कमल पर काल ब्रह्म को दे दिया जाता है। यह इसके प्रतिफल में साधक को पापमुक्त कर देता है। यदि साधक इस ॐ नाम की कमाई यानि भक्ति धन के प्रतिफल में ब्रह्मलोक जाना चाहता है तो यह कमाई वहाँ खर्च करके कर्मों के बंधन में रह जाता है। पुण्यों की कमाई ब्रह्मलोक रूपी होटल में खा-खर्च कर पापों के कारण नरक जाता है। अन्य प्राणियों के शरीरों में पाप का कष्ट भोगता है। परंतु सतगुरू का शिष्य ऐसी गलती नहीं करता। उसको तत्वज्ञान प्राप्त होता है। इसलिए वह सतगुरू का शिष्य ॐ नाम के जाप की कमाई काल को त्याग देता है, छोड़ देता है। काल ब्रह्म उसके प्रतिफल में सर्व पापों से मुक्त कर देता है। अध्याय 8 के श्लोक 28 में भी काल ब्रह्म ने कहा है कि जो योगी यानि सत्य साधक तत्वज्ञान को जानकर वेदों के पढ़ने यानि ज्ञान यज्ञ तथा अन्य यज्ञ यानि धार्मिक अनुष्ठान जैसे तप यानि स्वधर्म पालन में कष्ट सहन करना तप है, दान करने से जो पुण्यफल कहा है, उस सबका निःसंदेह उल्लंघन कर जाता है, वह सनातन परम धाम को प्राप्त हो जाता है।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में भी कहा है कि :-*

मेरे (रामपाल दास) द्वारा किया यथार्थ अनुवाद :- गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि (सर्वधर्मान्) मेरे स्तर की सर्व धार्मिक क्रियाऐं (माम्) मुझमें (परित्यज्य) त्यागकर तू केवल (एकम्) उस अद्वितीय अर्थात् जिसके समान अन्य कोई परमात्मा नहीं है, उस समर्थ परमेश्वर की (शरणम्) शरण में (व्रज) जा (अहम्) मैं (त्वा) तुझको (सर्व पापेभ्यः) सम्पूर्ण पापों से (मोक्षयिष्यामि) छुड़वा दूँगा यानि मुक्त कर दूँगा। तू (मा, शुचः) शोक मत कर।(18/66)

विश्लेषण :- तत्वज्ञान के अभाव से मेरे (रामपाल दास के) अतिरिक्त गीता के अन्य सब अनुवादकों ने ''व्रज'' शब्द का अर्थ आना किया है जबकि ''व्रज'' शब्द का अर्थ ''जाना'' है। जैसे अंग्रेजी भाषा के शब्द Go का अर्थ जाना, जाओ है। यदि कोई अज्ञानी किसी प्रकरण के अनुवाद में Go का अर्थ आना-आओ करे तो वह अनर्थ कर रहा है। आश्चर्य की बात तो यह है कि एस्कोन मिशन वाले श्री प्रभुपाद जी द्वारा किए गए इसी अध्याय 18 श्लोक 66 के अनुवाद में पहले मूल पाठ के प्रत्येक शब्द के अर्थ लिखे हैं। वहाँ पर ''व्रज'' का अर्थ ''जाओ'' ठीक किया है, परंतु नीचे अनुवाद में ''व्रज'' का अर्थ ''आओ'' कर दिया जिससे स्पष्ट है कि वास्तव में इस अध्याय 18 के श्लोक 66 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जाने को कहा है।

कपा देखें एस्कोन वाले प्रभुवाद जी द्वारा गीता अध्याय 18 श्लोक 62 के शब्दार्थ तथा अनुवाद की फोटोकॉपी :-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।। ६६।।

सर्व-धर्मान्–समस्त प्रकार के धर्म; **परित्यज्य**–त्यागकर; **माम्**–मेरी; **एकम्**–एकमात्र; **शरणम्**–शरण में; **व्रज**–जाओ; **अहम्**–मैं; **त्वाम्**–तुमको; **सर्व**–समस्त; **पापेभ्यः**–पापों से; **मोक्षयिष्यामि**–उद्धार करूँगा; **मा**–मत; **शुचः**–चिन्ता करो।

समस्त प्रकार के धर्मों का परित्याग करो और मेरी शरण में आओ। मैं समस्त पापों से तुम्हारा उद्धार कर दूँगा। डरो मत।

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 67 :- हे अर्जुन! तेरे को इस गीता वाले ज्ञान को नास्तिक से नहीं कहना चाहिए।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 68 :- जो पुरूष इस गीता ज्ञान को मेरे (काल ब्रह्म के) भक्तों को सुनाएगा, वह मुझे ही प्राप्त होगा।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 69 :- उससे बढ़कर मेरा प्रिय करने वाला कोई मनुष्य नहीं है तथा पथ्वी पर उससे बढ़कर मेरा प्रिय भविष्य में कोई दूसरा नहीं है।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 70 :- जो इस गीता का पाठ करेगा, उसके द्वारा मैं उसका (इष्टः) पूज्य देव होऊँगा। शास्त्रों का पाठ करने से ज्ञान यज्ञ का फल मिलता है। (अहम् ज्ञान यज्ञेन् इष्टः स्याम्) मैं उसका ज्ञान यज्ञ से पूज्य देव होऊँगा।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 71 :- इस गीता शास्त्र के पढ़ने से ज्ञान यज्ञ का फल होता है। इसके सुनने वाले को भी वही फल मिलता है। जिस कारण से ज्ञान यज्ञ के फल स्वरूप (शुभान् लोकान्) श्रेष्ठ लोकों यानि स्वर्ग को प्राप्त होगा। कुछ समय जन्म-मरण से मुक्त हो जाएगा।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 72 :- गीता ज्ञान दाता ने अर्जुन से पूछा कि हे पार्थ! क्या इस गीता शास्त्र को तूने ध्यान से सुना है? हे धनंजय! क्या तेरा अज्ञान जनित मोह नष्ट हो गया है?*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 73 :- हे श्रेष्ठ! आपकी कपा से मेरा मोह नष्ट हो गया है। मैंने स्मति प्राप्त कर ली है। मैं संशय रहित होकर स्थित हूँ। अतः आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 74 :- संजय बोला! इस प्रकार मैंने श्री वासुदेव से गीता का ज्ञान सुना, मैं बहुत खुश हूँ।*

❖ *गीता अध्याय 18 श्लोक 75-78 :- संजय ने धतराष्ट्र को बताया कि श्री व्यास जी से प्राप्त दिव्य दष्टि से मैंने सब सुना और आपको बताया, काल का स्वरूप देखा। मेरा विचार है कि जिस ओर श्री कष्ण तथा अर्जुन हैं, विजय उसी पक्ष की होगी।*

।। अर्जुन, भगवान ब्रह्म (काल) की शरण में रहा फिर भी पाप मुक्त नहीं हुआ।।

विशेष : अध्याय 18 के श्लोक 73 में अर्जुन कहता है कि मैं आपकी शरण में ही रहूँगा अर्थात् आपकी जो आज्ञा वही करूँगा। मैं युद्ध करूँगा। इसीलिए अर्जुन को काल भगवान पाप मुक्त नहीं कर सका। क्योंकि वह नादान अर्जुन काल की शरण में रहा। अर्जुन भी बेचारा क्या करे? प्रथम तो इतना डराया कि काँपने लग गया फिर उस परमात्मा को प्राप्त करने का मार्ग काल भगवान ने नहीं बताया। ऊँ मन्त्र तथा यज्ञों का करना बताया जो उस परमात्मा को पाने का नहीं है बल्कि काल जाल में ही रहने का है इसलिए तो अर्जुन पाप मुक्त नहीं हुआ। चूंकि प्रमाण है कि युद्ध में विजय के

उपरांत राजा युधिष्ठिर को बुरे स्वपन आने लगे। तब भगवान कृष्ण ने उन्हें एक यज्ञ की सलाह दी कि यज्ञ करो। तुम्हारे युद्ध में किए पाप कर्म दुःखी कर रहे हैं। जबकि अर्जुन तो उन्हें अजम-अनादि तथा सर्व भूतों (प्राणियों) का महान भगवान मानता ही था। प्रमाण के लिए देखें अध्याय 10 के श्लोक 12 से 14 तक। क्योंकि अर्जुन ने तो उनका काल (विराट) रूप अपनी आँखों से देखा था। यह तो हो ही नहीं सकता कि अर्जुन काल (ब्रह्म) को सर्व प्राणियों का महान ईश्वर व अजन्मा अनादि न मानता हो। फिर पाप कर्म जो युद्ध में हुए थे, को समाप्त करने की सलाह स्वयं भगवान कृष्ण ने दी थी कि तुम अंतिम श्वांस तक हिमालय में जा कर तप करो तथा वहीं शरीर समाप्त कर दो। तुम्हारे पाप जो युद्ध में हुए थे समाप्त हो जाएंगे। चारों पाण्डवों का शरीर हिमालय की बर्फ में शरीर गल कर नष्ट हो गया साथ में द्रौपदी तथा कुन्ती का भी तथा पांचवें युधिष्ठिर का केवल पंजा गला। चूंकि युधिष्ठिर ने झूठ बोला था कि अश्वत्थामा (द्रोणाचार्य का पुत्र) मर गया जबकि अश्वत्थामा मरा नहीं था। भगवान कृष्ण ने झूठ बुलवाया था। फिर चारों पाण्डव (भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव) तथा द्रौपदी व कुंती आदि भी नरक में डाले गए जिसका प्रमाण महाभारत में पृष्ठ नं. 1683 पर है और कुछ समय युधिष्ठिर को भी धोखे से नरक में डाला गया। फिर पाप मुक्त कौन हो सकता है? कृपया पाठक विचारें तथा सतगुरु कबीर साहेब के नुमायन्दे संत से नाम ले कर काल लोक से छुटकारा करवाएँ।

जैसा कि गीता जी के अध्याय 18 के श्लोक 64 तथा अध्याय 15 के श्लोक 4 में स्पष्ट है कि स्वयं काल ब्रह्म कह रहा है कि हे अर्जुन! मेरा उपास्य देव (इष्ट) भी वही परमात्मा (पूर्ण ब्रह्म) ही है तथा मैं (काल) भी उसी की शरण हूँ तथा वही सनातन स्थान (सतलोक) मेरा (काल का) भी वास्तविक ठिकाना (स्थान) है अर्थात् मेरा परम धाम भी वही है। क्योंकि ब्रह्म (काल पुरुष) भी वहीं (सतलोक) से निष्कासित है।

।। साहेब कबीर व गोरख नाथ की गोष्ठी।।

एक समय गोरख नाथ (सिद्ध महात्मा) काशी (बनारस) में स्वामी रामानन्द जी (जो साहेब कबीर के गुरु जी थे) से शास्त्रार्थ करने के लिए (ज्ञान गोष्टी के लिए) आए। जब ज्ञान गोष्टी के लिए एकत्रित हुए तब कबीर साहेब भी अपने पूज्य गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी के साथ पहुँचे थे। एक उच्च आसन पर रामानन्द जी बैठे उनके चरणों में बालक रूप में कबीर साहेब (पूर्ण परमात्मा) बैठे थे। गोरख नाथ जी भी एक उच्च आसन पर बैठे थे तथा अपना त्रिशूल अपने आसन के पास ही जमीन में गाड़ रखा था। गोरख नाथ जी ने कहा कि रामानन्द मेरे से चर्चा करो। उसी समय बालक रूप (पूर्ण ब्रह्म) कबीर जी ने कहा - नाथ जी पहले मेरे से चर्चा करें। पीछे मेरे गुरुदेव जी से बात करना।

योगी गोरखनाथ प्रतापी, तासो तेज पृथ्वी कांपी।
काशी नगर में सो पग परहीं, रामानन्द से चर्चा करहीं।
चर्चा में गोरख जय पावै, कंठी तोरै तिलक छुड़ावै।
सत्य कबीर शिष्य जो भयऊ, यह वृतांत सो सुनि लयऊ।
गोरखनाथ के डर के मारे, वैरागी नहीं भेष सवारे।
तब कबीर आज्ञा अनुसारा, वैष्णव सकल स्वरूप संवारा।
सो सुधि गोरखनाथ जो पायौ, काशी नगर शीघ्र चल आयौ।
रामानन्द को खबर पठाई, चर्चा करो मेरे संग आई।

रामानन्द की पहली पौरी, सत्य कबीर बैठे तीस ठौरी।
कह कबीर सुन गोरखनाथा, चर्चा करो हमारे साथा।
प्रथम चर्चा करो संग मेरे, पीछे मेरे गुरु को टेरे।
बालक रूप कबीर निहारी, तब गोरख ताहि वचन उचारी।

इस पर गोरख नाथ जी ने कहा तू बालक कबीर जी कब से योगी बन गया। कल जन्मा अर्थात् छोटी आयु का बच्चा और चर्चा मेरे (गोरख नाथ के) साथ। तेरी क्या आयु है? और कब वैरागी (संत) बन गए?

कबके भए वैरागी कबीर जी, कबसे भए वैरागी।
नाथ जी जब से भए वैरागी मेरी, आदि अंत सुधि लागी।।
धूंधूकार आदि को मेला, नहीं गुरु नहीं था चेला।
जब का तो हम योग उपासा, तब का फिरा अकेला।।
धरती नहीं जद की टोपी दीना, ब्रह्मा नहीं जद का टीका।
शिव शंकर से योगी, न थे जदका झोली शिका।।
द्वापर को हम करी फावड़ी, त्रेता को हम दंडा।
सतयुग मेरी फिरी दुहाई, कलियुग फिरौ नो खण्डा।।
गुरु के वचन साधु की संगत, अजर अमर घर पाया।
कहैं कबीर सुनों हो गोरख, मैं सब को तत्व लखाया।।

साहेब कबीर जी ने गोरख नाथ जी को बताते हैं कि मैं कब से वैरागी बना। साहेब कबीर ने उस समय वैष्णों संतों जैसा वेष बना रखा था। जैसा श्री रामानन्द जी ने बाणा (वेष) बना रखा था। जैसे मस्तिक में चन्दन का टीका, टोपी व झोली सिक्का एक फावड़ी (जो भजन करने के लिए लकड़ी की अंग्रेजी के अक्षर '' T '' के आकार की होती है) तथा एक डण्डा (लकड़ी का लट्ठा) साथ लिए हुए थे। ऊपर के शब्द में साहेब कहते हैं कि जब कोई सष्टि (काल सष्टि) नहीं थी तथा न सतलोक सष्टि थी तब मैं (कबीर) अनामी रूप में था और कोई नहीं था। चूंकि साहेब कबीर ने ही सतलोक सष्टि शब्द से रची तथा फिर काल (ज्योति निरंजन-ब्रह्म) की सष्टि भी सतपुरुष ने {ज्योति निरंजन (ब्रह्म) ने तप करके राज्य मांगा तब} रची। जब मैं अकेला रहता था जब धरती (पथ्वी) भी नहीं थी तब से मेरी टोपी जानो। ब्रह्मा जो गोरखनाथ तथा उनके गुरु मच्छन्दर नाथ आदि सर्व प्राणियों के शरीर बनाने वाला पैदा भी नहीं हुआ था। तब से मैंने टीका लगा रखा है अर्थात् मैं (कबीर) तब से सतपुरुष आकार रूप मैं ही हूँ।

सतयुग-त्रेतायुग-द्वापर तथा कलियुग ये चार युग तो मेरे सामने असँख्यों जा लिए। कबीर साहेब बताते हैं कि हमने सतगुरु वचन में रह कर अजर-अमर घर (सतलोक) पाया। इसलिए सर्व प्राणियों को तत्व (वास्तविक ज्ञान) बताया है कि पूर्ण गुरु से उपदेश ले कर आजीवन गुरु वचन में चलते हुए पूर्ण परमात्मा का ध्यान सुमरण करके उसी अजर-अमर सतलोक में जा कर जन्म-मरण रूपी अति दुःखमयी संकट से बच सकते हो।

इस बात को सुन कर गोरखनाथ जी ने पूछा हैं कि आपकी आयु तो बहुत छोटी है अर्थात् आप लगते तो हो बालक से।

जो बूझे सोई बावरा, क्या है उम्र हमारी। असंख युग प्रलय गई, तब का ब्रह्मचारी।।टेक।।
कोटि निरंजन हो गए, परलोक सिधारी। हम तो सदा महबूब हैं, स्वयं ब्रह्मचारी।।
अरबों तो ब्रह्मा गए, उनन्चास कोटि कन्हैया। सात कोटि शम्भू गए, मोर एक नहीं पलैया।।

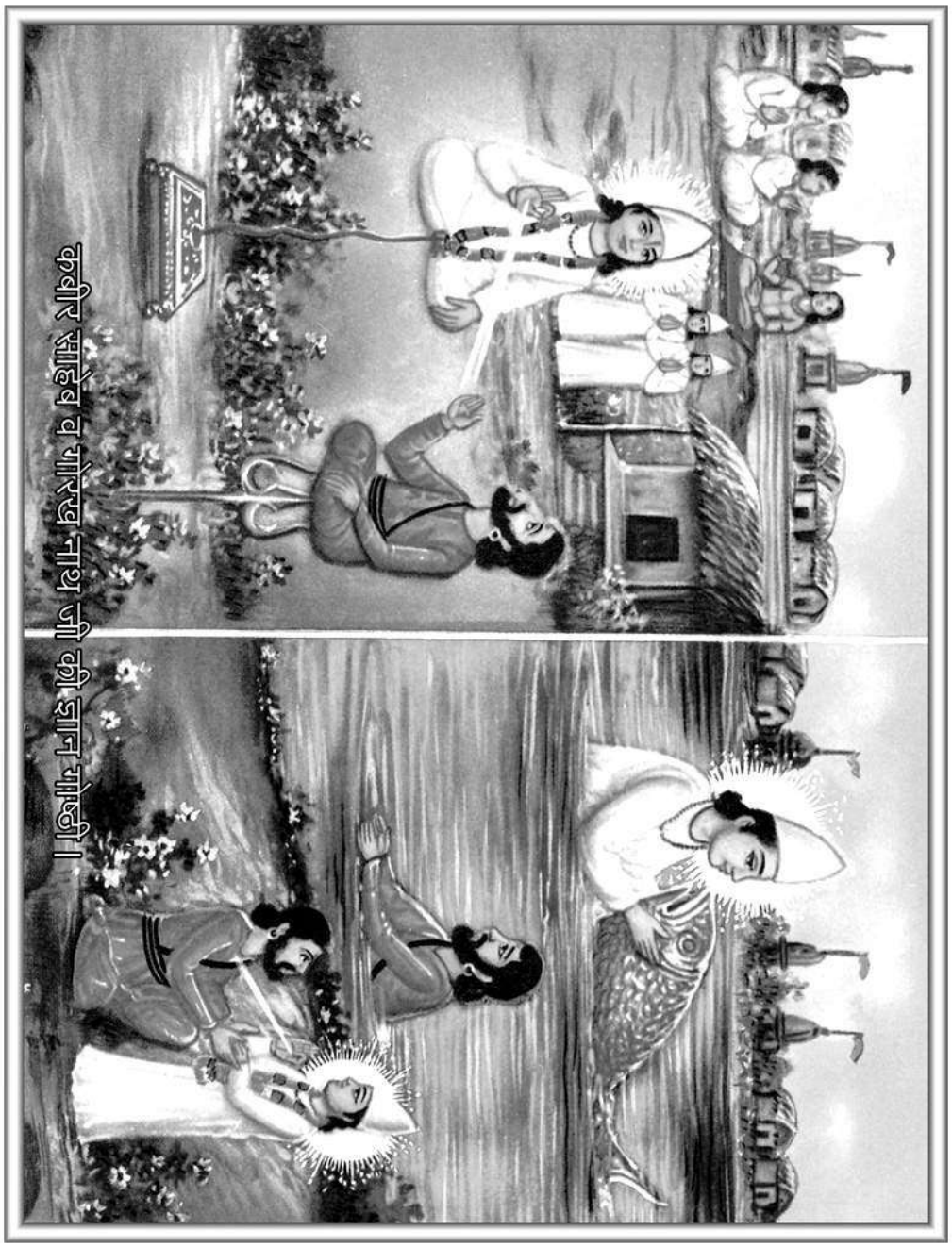
कबीर साहेब व गोरख नाथ की कथा ज्ञान गोष्ठी।

कोटिन नारद हो गए, मुहम्मद से चारी। देवतन की गिनती नहीं है, क्या सष्टि विचारी।।
नहीं बुढ़ा नहीं बालक, नाहीं कोई भाट भिखारी। कहैं कबीर सुन हो गोरख, यह है उम्र हमारी।।

श्री गोरखनाथ सिद्ध को सतगुरु कबीर साहेब अपनी आयु का विवरण देते हैं। असंख युग प्रलय में गए। तब का मैं वर्तमान हूँ अर्थात् अमर हूँ। करोड़ों ब्रह्म (क्षर-काल) भगवान मत्यु को प्राप्त होकर पुनर्जन्म प्राप्त कर चुके हैं।

एक ब्रह्मा की आयु 100 (सौ) वर्ष की होती है।

ब्रह्मा का एक दिन = 1000 (एक हजार) चतुर्युग तथा इतनी ही रात्रि।

दिन-रात = 2000 (दो हजार) चतुर्युग।

{नोट - ब्रह्मा जी के एक दिन में 14 इन्द्रों का शासन काल समाप्त हो जाता है। एक इन्द्र का शासन काल बहत्तर चतुर्युग का होता है। इसलिए वास्तव में ब्रह्मा जी का एक दिन 72 गुणा 14 = 1008 चतुर्युग का होता है तथा इतनी ही रात्रि, परन्तु इस को एक हजार चतुर्युग ही मान कर चलते हैं।}

महीना= 30 गुणा 2000 = 60000 (साठ हजार) चतुर्युग।

वर्ष = 12 गुणा 60000 = 720000 (सात लाख बीस हजार) चतुर्युग का।

ब्रह्मा जी की आयु -

720000 गुणा 100= 72000000 (सात करोड़ बीस लाख) चतुर्युग।

ब्रह्मा से सात गुणा विष्णु जी की आयु -

72000000 गुणा 7 = 504000000 (पचास करोड़ चालीस लाख) चतुर्युग।

विष्णु से सात गुणा शिव जी की आयु -

504000000 गुणा 7 = 3528000000 (तीन अरब बावन करोड़ अस्सी लाख) चतुर्युग की हुई।

ऐसी आयु वाले सत्तर हजार शिव भी मर जाते हैं तब एक ज्योति निरंजन (ब्रह्म) मरता है। पूर्ण परमात्मा के द्वारा पूर्व निर्धारित किए समय पर एक शंख बजता है उस समय एक ब्रह्मण्ड में महाप्रलय होती है। यह समय (सत्तर हजार शिव की मत्यु अर्थात् एक सदाशिव/ज्योति निरंजन की मत्यु) एक युग होता है परब्रह्म का। परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का होता है इतनी ही रात्रि होती है तीस दिन रात का एक महिना तथा बारह महिनों का परब्रह्म का एक वर्ष हुआ तथा सौ वर्ष की परब्रह्म की आयु है। परब्रह्म की भी मत्यु होती है। ब्रह्म अर्थात् ज्योति निरंजन की मत्यु परब्रह्म के एक दिन के पश्चात् होती है इस प्रकार कबीर परमात्मा ने कहा है कि करोड़ों ज्योति निरंजन मर लिए मेरी एक पल भी आयु कम नहीं हुई है अर्थात् अमर पुरुष हूं। कबीर साहेब कहते हैं कि हम अमर हैं। अन्य भगवान जिसका तुम आश्रय ले कर भक्ति कर रहे हो वे नाशवान हैं। फिर आप अमर कैसे हो सकते हो? अरबों तो ब्रह्मा गए, 49 कोटि कन्हैया। सात कोटि शंभु गए, मोर एक नहीं पलैया।

विचार करें कि अमर पुरुष कौन है? 343 करोड़ त्रिलोकिय ब्रह्मा मर जाते हैं, 49 करोड़ त्रिलोकिय विष्णु तथा 7 करोड़ त्रिलोकिय शिव मर जाते हैं तब एक ज्योति निरंजन (काल-ब्रह्म) मरता है। जिसे गीता जी के अध्याय 15 के श्लोक 16 में क्षर (नाशवान) भगवान कहा है तथा इसी श्लोक में जिसे अक्षर (अविनाशी) कहा है वह परब्रह्म है जिसे अक्षर पुरुष भी कहते हैं। अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म भी नष्ट होता है। यह काल भी करोड़ों समाप्त हो जाएंगे। तब सर्व अण्ड-ब्रह्मण्ड नाश में आवेंगे। केवल सतलोक बचेगा। फिर अचिंत सत्यपुरूष के आदेश से सष्टि रचेगा। यही क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष की सष्टि फिर शुरु हो जाएगी।

गीता जी के अध्याय 15 के श्लोक 17 में कहा है कि वह उत्तम पुरुष (पूर्ण परमात्मा) तो कोई और ही है जिसे अविनाशी परमात्मा नाम से जाना जाता है। वह पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर सतपुरुष स्वयं कबीर साहेब है। केवल सतपुरुष अजर-अमर परमात्मा है तथा उसी का सतलोक (सतधाम) अमर है जिसे अमर लोक भी कहते हैं। वहाँ की भक्ति करके भक्त आत्मा पूर्ण मुक्त होती है। जिसका कभी मरण नहीं होता। कबीर साहेब ने कहा कि यह उपलब्धि सोहं शब्द के जाप से प्राप्त होती है जो उसके मर्म भेदी गुरु से मिले तथा उसके बाद सारनाम मिले। फिर सतलोक में वास तथा सतपुरुष प्राप्ति होती है। करोंड़ों नारद तथा मुहम्मद जैसी पाक (पवित्र) आत्मा भी आकर (जन्म कर) जा (मर) चुके हैं, देवताओं की तो गिनती नहीं। फिर आम मानुष शरीर धारी प्राणियों तथा जीवों का तो हिसाब क्या लगाया जा सकता है? मैं (कबीर साहेब) न बूढ़ा न बालक, मैं तो जवान रूप में रहता हूँ जो ईश्वरिय शक्ति का प्रतीक है। यह तो मैं लीलामयी शरीर में आपके समक्ष हूँ। कहे कबीर सुनों जी गोरख, मेरी आयु (उम्र) यह है जो आपको ऊपर बताई है।

यह सुन कर श्री गोरखनाथ जी जमीन में गड़े लगभग 7 फूट ऊँचें त्रिशूल के ऊपर के भाग पर अपनी सिद्धि शक्ति से उड़ कर बैठ गए और कहा कि यदि आप इतने महान हो तो मेरे बराबर में (जमीन से लगभग सात फूट) ऊँचा उठ कर बातें करो। यह सुन कर कबीर साहेब बोले नाथ जी! ज्ञान गोष्टी के लिए आए हैं न कि नाटक बाजी करने के लिए। आप नीचे आएं तथा सर्व भक्त समाज के सामने यथार्थ भक्ति संदेश दें।

श्री गोरखनाथ जी ने कहा कि आपके पास कोई शक्ति नहीं है। आप तथा आपके गुरुजी दुनियाँ को गुमराह कर रहे हो। आज तुम्हारी पोल खुलेगी। ऐसे हो तो आओ बराबर। तब कबीर साहेब के बार-2 प्रार्थना करने पर भी नाथ जी बाज नहीं आए तो साहेब कबीर ने अपनी पराशक्ति (पूर्ण सिद्धि) का प्रदर्शन किया। साहेब कबीर की जेब में एक कच्चे धागे की रील (कुकड़ी) थी जिसमें लगभग 150 (एक सौ पचास) फुट लम्बा धागा लिपटा (सिमटा) हुआ था, को निकाला और धागे का एक सिरा (आखिरी छोर) पकड़ा और आकाश में फैंक दिया। वह सारा धागा उस बंडल (कुकड़ी) से उधड़ कर सीधा खड़ा हो गया। साहेब कबीर जमीन से आकाश में उड़े तथा लगभग 150 (एक सौ पचास) फुट सीधे खड़े धागे के ऊपर वाले सिरे (छोर) पर सुखासन (स्वाभाविक बैठते हैं) पर बैठ कर कहा कि आओ नाथ जी! बराबर में बैठकर चर्चा करें। गोरखनाथ जी ने ऊपर उड़ने की कोशिश की लेकिन उल्टा जमीन पर टिक गए।

पूर्ण परमात्मा (पूर्णब्रह्म) के सामने सिद्धियाँ निष्क्रिय हो जाती हैं। जब गोरख नाथ जी की कोई कोशिश सफल नहीं हुई, तब जान गए कि यह कोई मामूली भक्त या संत नहीं है। जरूर कोई अवतार (ब्रह्मा, विष्णु, महेश में से) है। तब साहेब कबीर से कहा कि हे परम (उत्तम) पुरुष! कृप्या नीचे आएँ और अपने दास पर दया करके अपना परिचय दें। आप कौन शक्ति हो? किस लोक से आना हुआ है? तब कबीर साहेब नीचे आए और कहा कि -

अवधु अविगत से चल आया, कोई मेरा भेद मर्म नहीं पाया।।टेक।।
ना मेरा जन्म न गर्भ बसेरा, बालक है दिखलाया।
काशी नगर जल कमल पर डेरा, तहाँ जुलाहे ने पाया।।
माता–पिता मेरे कछु नहीं, ना मेरे घर दासी।
जुलहा को सुत आन कहाया, जगत करे मेरी है हांसी।।
पांच तत्व का धड़ नहीं मेरा, जानूं ज्ञान अपारा।

सत्य स्वरूपी नाम साहिब का, सो है नाम हमारा।।
अधर दीप (सतलोक) गगन गुफा में, तहां निज वस्तु सारा।
ज्योति स्वरूपी अलख निरंजन (ब्रह्म) भी, धरता ध्यान हमारा।।
हाड चाम लोहू नहीं मोरे, जाने सत्यनाम उपासी।
तारन तरन अभै पद दाता, मैं हूं कबीर अविनाशी।।

भावार्थ :- साहेब कबीर ने कहा कि हे अवधूत गोरखनाथ जी मैं तो अविगत स्थान (जिसकी गति या भेद कोई नहीं जानता उस सतलोक) से आया हूँ। मैं तो स्वयं शक्ति से बालक रूप बना कर काशी (बनारस) में एक लहर तारा तालाब में कमल के फूल पर प्रकट हुआ हूँ। वहाँ पर नीरू-नीमा नामक जुलाहा दम्पति को मिला जो मुझे अपने घर ले आया। मेरे मात-पिता नहीं हैं। न ही कोई घर दासी (पत्नी) है और जो उस परमात्मा का वास्तविक नाम है, वही कबीर नाम मेरा है। आपका ज्योति स्वरूप जिसे आप अलख निरंजन (निराकार भगवान) कहते हो वह ब्रह्म भी मेरा ही जाप करता है। मैं सतनाम का जाप करने वाले साधक को प्राप्त होता हूँ अर्थात् वहीं मेरे विषय में सही जानता है। हाड-चाम तथा लहु (खून) से बना मेरा शरीर नहीं है। कबीर साहेब सतनाम की महिमा बताते हुए कहते हैं कि मेरे मूल स्थान (सतलोक) में सतनाम के आधार से जाया जाता है। अन्य साधकों को संकेत करते हुए प्रभु कबीर (कविर्देव) जी कह रहे हैं कि मैं उसी का जाप करता रहता हूँ। इसी मन्त्र (सतनाम) से सतलोक जाने योग्य होकर फिर सारनाम प्राप्ति करके जन्म-मरण से पूर्ण छुटकारा मिलता है। यह तारन तरन पद (पूजा विधि) मैंने (कबीर साहेब अविनाशी भगवान ने) आपको बताई है। इसे कोई नहीं जानता। गोरख नाथ जी को बताया कि हे पुण्य आत्मा! आप काल क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) के जाल में ही हो। न जाने कितनी बार आपके जन्म हो चुके हैं। कभी चौरासी लाख जूनियों में कष्ट पाया। आपकी चारों युगों की भक्ति को काल अब (कलियुग में) नष्ट कर देता यदि आप मेरी शरण में नहीं आते।

यह काल इक्कीस ब्रह्मण्ड का मालिक है। इसको शाप लगा है कि एक लाख मानव शरीर धारी (देव व ऋषि भी) जीव प्रतिदिन खायेगा तथा सवा लाख उत्पन्न करेगा (मनुष्य शरीर वाले)। इस प्रकार प्रतिदिन पच्चीस हजार बढ़ रहे हैं। उनको ठिकाने लगाए रखने के लिए तथा कर्म भुगताने के लिए अपना कानून बना कर चौरासी लाख जूनियाँ बना रखी हैं। इनमें जीव बिल्कुल अनभिज्ञ रहता है तथा इन्हीं फालतु जीवों से ही शरीर बनाता है जैसे खून में जीवाणु, वायु में जीवाणु आदि-2। इसकी पत्नी आदि माया (प्रकति देवी) अष्टंगी (आठ भुजाओं वाली) है। इसी से काल (ब्रह्म-अलख निरंजन) ने (पत्नी-पति के संयोग से) तीन पुत्र ब्रह्मा-विष्णु-शिव उत्पन्न किए। इन तीनों को अपने पक्के सहयोगी बना कर ब्रह्मा को शरीर बनाने का, विष्णु को पालन-पोषण का और शिव को संहार करने का कार्य दे रखा है। इनसे प्रथम तप करवाता है फिर सिद्धियाँ भर देता है जिसके आधार पर इनसे अपना उल्लु सीधा करता है और अंत में इन्हें (जब ये शक्ति रहित हो जाते हैं) भी मार कर नए तीन पुत्र पैदा करता है। ऐसे अपने काल लोक को चला रहा है। इन सब से ऊपर पूर्ण परमात्मा है। उसका ही अवतार मुझ (कबीर) को जान।

गोरख नाथ के मन में विश्वास हो गया कि कोई शक्ति है जो कुल का मालिक है। फिर गोरख नाथ ने कहा कि मेरी एक शक्ति और देखो। यह कह कर गंगा की ओर चल पड़ा। सर्व दर्शकों की भीड़ भी साथ ही चली। लगभग 500 फुट पर गंगा नदी थी। उसमें जा कर छलांग लगाते हुए कहा कि मुझे ढूंढ दो। फिर मैं (गोरखनाथ) आप का शिष्य बन जाऊँगा। गोरखनाथ मछली बन गए।

साहेब कबीर ने उसी मछली को पानी से बाहर निकाल कर सबके सामने गोरखनाथ बना दिया। तब गोरखनाथ जी ने साहेब कबीर को पूर्ण परमात्मा स्वीकार किया और शिष्य बने। साहेब कबीर से सतनाम व सारनाम ले कर भक्ति की। तब काल जाल से मुक्त हुए।

गीता जी के अध्याय 14 के श्लोक 26,27 का भाव है कि साधक अव्याभिचारिणी भक्ति अर्थात् पूर्ण आश्रित मुझ (काल-ब्रह्म) पर हो कर (अन्य देवी-देवताओं तथा माता, ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि की पूजा त्याग कर) भक्ति एक मेरे मन्त्र ऊँ का जाप करता है वह उपासक उस परमात्मा को पाने योग्य हो जाता है और आगे की साधना करके उस परमानन्द के परम सुख को भी मेरे माध्यम से प्राप्त करता है।

जैसे कोई विधार्थी मैट्रिक, बी.ए., एम.ए. करके किसी कोर्स में प्रवेश ले कर सर्विस प्राप्त करके रोजी प्राप्त करके सुखी होता है तो उसके लिए वह मैट्रिक, बी.ए. या एम.ए. जिसके बाद कोर्स (ट्रेनिंग) में प्रवेश किया। उसको प्रतिष्ठा (अवस्था) अर्थात् सहयोगी हुआ। सर्विस प्रदान कर्त्ता नहीं हुआ। ठीक इसी प्रकार काल भगवान (ब्रह्म) कह रहा है कि उस अविनाशी परमात्मा के अमरत्व का और नित्य रहने वाले स्वभाव का तथा धर्म का और अखण्ड स्थाई रहने के आनन्द का सहयोगी मैं (ब्रह्म) हूँ। इसी का प्रमाण गीता जी के अध्याय 18 के श्लोक 66 में कहा है कि सर्व अन्य साधनाओं को मुझमें त्याग कर एक (पूर्णब्रह्म) की शरण को प्राप्त कर तब तेरे सर्व पाप माफ करवा दूंगा। जैसे जिन भक्त आत्माओं ने काल (ब्रह्म) के ऊँ मन्त्र का जाप अनन्य मन से किया। उनको कबीर भगवान ने आगे की उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति प्रदान करके काल लोक से पार किया। जैसे नामदेव नामक परम भक्त केवल एक नाम ऊँ का जाप करते थे। उससे उनको बहुत सिद्धियाँ प्राप्त हो गई थी फिर भी मुक्ति नहीं थी। फिर कबीर साहेब श्री नामदेव जी को मिले तथा सतलोक व सतपुरुष का ज्ञान कराया। सोहं मन्त्र दिया जो परब्रह्म का जाप है। फिर सार शब्द दिया जो पूर्णब्रह्म का जाप है। जब नामदेव जी मुक्त हुए।

ऐसे ही गोरखनाथ जी ने भी एक मन्त्र अलख निरंजन का जाप तथा चांचरी मुद्रा की साधना की। तब साहेब कबीर ने उन्हें ऊँ तथा सोहं मन्त्र दिया।

।। साहेब कबीर द्वारा रामानन्द जी को सतज्ञान करवाना।।

इसी प्रकार स्वामी रामानन्द जी चारों पवित्र वेदों के ज्ञाता श्री मद्भागवत् गीता के मर्मज्ञ ज्ञाता जो केवल एक ऊँ मन्त्र के जाप में पूर्ण मुक्ति चाह रहे थे, को सतलोक दिखाया और सतपुरुष रूप में दर्शन सतलोक में दिए। तब स्वामी रामानन्द जी ने कहा कि हे कबीर भगवान् आप पूर्ण परमात्मा हैं तथा मुझे पार कर दिया।

दोहु ठोर है एक तूं, भया एक से दोय। गरीबदास मुझ कारने, उतरे हो मग जोय।।
मैं भक्ता मुक्ता भया, किया कर्म कुन्द नाश। गरीबदास अविगत मिले, मेटी मन की बांस।।
बोलत रामानंद जी, सुनि कबीर करतार। गरीबदास सब रूप में, तुम ही बोलनहार।।
तुम साहेब तुम संत हो, तुम सतगुरु तुम हंस। गरीबदास तुम रूप बिन, और न दूजा अंस।।

।।गीता का ज्ञान सुनने व सुनाने वाले भी काल जाल में।।

❖ *अध्याय 18 के श्लोक 67 से 71 में लिखा है कि अर्जुन यह मेरा गीता ज्ञान अश्रद्धालुओं को नहीं कहना चाहिए तथा जो भक्त श्रद्धा से सुने उन्हें सुनाने वाला व्यक्ति भी मुझे (काल के मुख में*

आजाएगा) ही प्राप्त होगा। क्योंकि इनका उपास्य देव (इष्ट) मैं (काल) ही होऊँगा। क्योंकि धार्मिक शास्त्र व ग्रन्थ पढ़ने से ज्ञान यज्ञ हो जाती है। उसका कुछ समय स्वर्ग में फल भोग कर फिर चौरासी लाख जूनियों व नरक का चक्र सदा बना रहेगा। अध्याय 18 के श्लोक 72 में काल भगवान कह रहा है कि क्या गीता को तूने एक चित हो कर सुना है? हे धनंजय! क्या तेरा अज्ञान जनित मोह नष्ट हो गया? भाव यह है कि क्या अर्जुन तुझे ज्ञान हो गया और तेरा संसार से मोह हटा या नहीं? क्या आया समझ में अर्थात् क्या फैसला किया?

❖ *अध्याय 18 के श्लोक 73 में अर्जुन कह रहा है कि आप की कृप्या से मेरा मोह नष्ट हो गया और मुझे ज्ञान हो गया है। संशय रहित हो कर स्थित हूँ और आप जो कहोगे वही करूँगा। अर्जुन (विवश तथा और कोई चारा न देख कर सोचा कि मरना तो है ही, युद्ध न करूंगा तो यह काल मारेगा। यदि एक बार फिर वही रूप दिखा दिया तो अभी भय से जीवन लीला समाप्त हो जाएगी। हो सकता है युद्ध जीत जाएँ तो राज तो करलेगें) बोला भगवान आ गई समझ में। आपकी शरण हूँ तथा आपकी जो आज्ञा वही करूंगा अर्थात् युद्ध करूंगा।*

यहाँ एक बात विशेष विचारणीय है कि अर्जुन कह रहा है कि मैं आप की शरण में हूँ। जो आप कहोगे वही करूँगा। काल भगवान अध्याय 18 के श्लोक 65 में कह रहा है कि तू मेरी शरण रह। मुझे आदर पूर्वक प्रणाम कर। मेरे में मन वाला बन फिर मुझे ही प्राप्त होगा। मैं सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ। तू चिंता मत कर। फिर महाभारत में प्रमाण है कि पाँचों पाण्डव नरक में डाले गए। युधिष्ठिर कम समय के लिए। फिर युधिष्ठिर ने पुण्य दिए तब वे नरक से छुटे। फिर भगवन वचन जो अध्याय 18 के श्लोक 65 में कहे थे, उनका क्या बना?

अध्याय 18 के श्लोक 74 से 78 तक संजय धृतराष्ट्र के दिल को धड़का रहा है, कह रहा है कि जिसके पक्ष में श्री कृष्ण है वे (पाण्डव) तो निःसंदेह विजयी होंगे। धृतराष्ट्र की छाती पर पहले ही पहाड़ रख दिया। गीता सुन कर धृतराष्ट्र कितना चिंतित हुआ होगा। शांति तो दूर रही चूंकि श्री कृष्ण पाण्डवों के पक्ष में थे जिसका परिणाम धृतराष्ट्र के पुत्रों की हार निश्चित थी।

❖ *विशेष :- गीता ज्ञान सुनने से न तो धृतराष्ट्र को शांति मिली, न अर्जुन को। घोर युद्ध करके परेशानी तथा अभिमन्यु वध की चिंता-दुःख तथा युद्ध में मारे व्यक्तियों की हत्या का पाप अर्जुन तथा पाण्डवों को मिला।*

गीता ज्ञान में बताए अनुसार परम अक्षर ब्रह्म की साधना से संसार में सुख-शांति प्राप्ति होती है तथा सनातन परम धाम तथा परम शांति भी प्राप्त होती है जिसकी गवाही गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 के श्लोक 62 में दी है।

।।सत साहेब।।

❑❑❑